

વિક્રમ સંવત-૨૦૩૬, ભાદરવા સુદ-૨, ગુરુવાર, તા. ૧૧-૯-૧૯૮૦
વચનામૃત- ૩૭૭. ૩૭૮. પ્રવચન નં. ૩૦

વચનામૃત-૩૭૭. મુનીકી મુખ્ય બાત કહી છે. બાત તો યહ છે કે આત્મા વસ્તુકી એસી સ્થિતિ છે કે જો જોગકા કંપન તેરહવેં ગુણસ્થાન તક છે, વહ કંપન જીવમેં નહીં છે. આહાહા..! સજોગ દશા. સયોગી કેવલી. ઉન્હેં ભી યોગ કંપન છે. પરંતુ વહ પર્યાયદષ્ટિસે જાનને જેસી છે. વસ્તુસ્થિતિ દેખને પર ઉસમેં યોગ છે હી નહીં. પંદ્રહ યોગ છે, ચાર મન, ચાર વચન, સાત કાયાકે. ઔદારિક, વૈક્રિક, આહારક ઓર કાર્માણ. આહાહા..! એસી જો વસ્તુ, ઉસે પ્રગટ કરને ઓર વિશેષ અનુભવ કરનેકે લિયે... 'સ્વભાવમેંસે વિશેષ આનંદ પ્રગટ કરનેકે લિયે...' આહા..! સ્વભાવમેં તો આનંદ પડા છે. આહાહા..! જોગકી કંપનક્રિયા ભી આત્મામેં છે નહીં. અરે..! એસા લિયા ન માર્ગણામેં? સંયમલબ્ધિસ્થાન ભી જીવમેં નહીં. ક્યોંકિ વહ તો ક્ષયોપશમભાવ છે. સંયમલબ્ધિસ્થાન ક્ષયોપશમભાવ છે. વહ ભી જીવમેં નહીં છે. આહાહા..! ઉસકી દષ્ટિ, એસે જીવકી દષ્ટિ, ઉસકા અનુભવ વહ સમ્યજ્ઞર્શનકી શુરૂઆત છે. આહાહા..! યહ ચીજ મુખ્ય સમજે નહીં.

યહાં તો કહતે હેં, 'સ્વભાવમેંસે...' ઉસમેં તો કુછ છે નહીં. કંપન રાગ, દ્વેષ આદિ સ્વભાવમેં તો છે નહીં. આહાહા..! કંપન છે નહીં. જો કંપન ચૌદહલેમેં જાય, અજોગી દશા, ઉસકા એક અંશ ભી ચૌથે ગુણસ્થાનમેં પ્રગટ હોને પર... જીવમેં તો વહ છે હી નહીં. આહાહા..! જીવદ્રવ્યકે અંદર તો જોગ મન, વચન, કાયાકે વશસે હોનેવાલી કંપન દશા, વહ ભી જીવદ્રવ્યમેં નહીં છે. જીવદ્રવ્યમેં છે નહીં. આહાહા..! યહાં જીવકો જાના. જીવ-આત્મા ઉસે કહેં, જિસમેં સંયમલબ્ધિસ્થાનકા વિકાસ હો, વહ ભી પર્યાયમેં છે, વસ્તુમેં છે નહીં. આહાહા..! ઓર ઉસ વસ્તુકી દષ્ટિમેં આનંદ છે.

'સ્વભાવમેંસે વિશેષ આનંદ પ્રગટ કરનેકે લિયે...' વિશેષ ક્યોં કહા? ચૌથે, પાંચવેમેં આનંદ તો થા, પરંતુ મુનિરાજ તો વિશેષ આનંદકે લિયે.. આહાહા..! 'સ્વભાવમેંસે વિશેષ આનંદક પ્રગટ કરનેકે લિયે...' વિશેષ ક્યોં કહા? કે આનંદ પ્રગટ હોતા છે વહ ભી વિશેષ છે ઓર ચૌથે, પાંચવેસે ભી મુનિકો વિશેષ આનંદ હોતા છે. ઈસલિયે વિશેષકે દો પ્રકાર. આનંદ સ્વયં વિશેષ છે પર્યાયમેં ઓર વિશેષ આનંદ

प्रगट करनेके लिये 'मुनिराज जंगलमें बसे हैं...' आलाला..! जैसा जो यह भगवान आत्मा अज्ञेगी स्वरूप भगवान आत्मा, उसका स्वरूप अज्ञेग, अकषाय और आनंद और पूर्ण ज्ञानादि अनंत शक्तिका सागर. उसे 'विशेष आनंद प्रगट करनेके लिये मुनिराज जंगलमें बसे हैं.' दूसरा कोई कारण नहीं है. आला..! जहां मनुष्यकी कोई आलट नहो, आलट यानी आना-जाना. अकांत कोई जंगलमें गुफामें, कोई जाली (स्थान) हो, वहां जाकर ध्यानमें (रहते हैं). जो चीज है वह तो स्वयंके पास है.

'विशेष आनंद प्रगट करनेके लिये मुनिराज जंगलमें बसे हैं.' आलाला..! गृहस्थाश्रममें पंचम गुणस्थान होता है, परंतु मुनिको जो आनंद होता है, जैसा आनंद नहीं (होता). क्योंकि यहां पंचममें तो थोड़ी उपाधि भी है. यहां कुछ नहीं है. अक प्रभु आत्मा.. आत्मा.. आत्मा. 'उस हेतु उनको निरंतर परमपारिणामिकभावमें लीनता वर्तती है,...' आलाला..! इस कारणसे संतोंको अंतर निरंतर, अंतरमें 'निरंतर परमपारिणामिकभावमें लीनता वर्तती है,...' आलाला..! परमपारिणामिक स्वभाव जो ध्रुव, जो नित्य स्वभाव, जो सामान्य स्वभाव, उसमें मुनिराजकी लीनता वर्तती है. आलाला..! लीनता है वह विशेष है, वह पर्याय है. परंतु द्रव्य जो है वह सामान्य है. उसमें विशेष लीनताके लिये जंगलमें बसते हैं. आलाला..!

'दिन-रात...' दिन हो या रात हो.. आलाला..! भगवान तो सदा निरंतर अनादि सनातन पडा है. उसे कोई दिन और रातकी अपेक्षा नहीं है. आलाला..! दिन हो तो ठीक पडे और रातके अंधेरेमें ठीक न पडे. जैसा है नहीं. आलाला..! प्रकाशका पुंज प्रभु.. दिन-रात परमपारिणामिकभावमें लीनता वर्तती है. आलाला..! स्वभावभाव जो त्रिकाव, लब्धिस्थान भी जिसमें गिनतीमें आया नहीं, कंपन भी जिसमें गिननेमें आया नहीं, जैसा परम स्वभावभाव, उसमें लीनता वर्तती है. 'दिन-रात रोमरोममें अक आत्मा ही रम रहा है.' आलाला..! मुनिपना. भगवान! लेकिन धन्य दशा! आला..! अंतरका पंचम पारिणामिक स्वभाव, उसका अनुभव बिना समकित न हो तो मुनिपना तो कहांसे हो? आलाला..! जैसी दशा!

'शरीर है किन्तु शरीरकी कोई चिंता नहीं है,...' 'दिन-रात रोमरोममें अक आत्मा ही रम रहा है.' पीछली रयनमें सोते हैं कि नहीं? लेकिन वे तो अंतरमें आनंदमें है. उस वक्त भी अंतरमें आनंदमें ही है. आलाला..! निद्राके कालमें भी अतीन्द्रिय आनंदमय दशा है. आलाला..! पूर्ण प्रभु भिन्न (उसमें अन्य) कुछ है नहीं. दूर नहीं है. जहां जाओ वहां स्वयं है. आलाला..! कोई क्षेत्र, कोई कालमें,

कोई जंगल या कोई गांव.. आलाला..! अपना शुद्ध स्वरूप, उसमें रोमरोममें अंक आत्मा ही रम रहा है. रोमरोममें उसका अर्थ-आत्मप्रदेशमें. रोम तो बाव है. 'शरीर है किन्तु शरीरकी कोई चिंता नहीं है, देहातीत जैसी दशा है.' देखसे रहित हो, ऐसी तो जिनकी दशा हो गई. आलाला..! चलते सिद्ध! ऐसा कला है. 'उत्सर्ग एवं अपवाहकी मैत्रीपूर्वक रहनेवाले हैं.' अंतरमें लीन रहते हैं और लीन रहनेमें थोडा प्रमाद आ जाय तो अपवाह मार्गमें स्वाध्याय आदिका विकल्प आती है. स्वाध्यायका विकल्प वह अपवाह है. अंतरमें तो स्वाध्याय-स्व-अध्याय है. आलाला..!

अंतर स्वरूप भगवान आत्मा स्व सन्मुखमें तो स्वाध्याय है ही, परंतु अंदर विशेष लीन न हो सके, विशेष-विशेष, विकल्प आता है तो वह अपवाहमार्ग है. तो वह अपवाह ज्वालमें आ जाता है कि अभी अंतरमें स्थिर नहीं रह सकता हूं. अपवाह और उत्सर्ग. अंतरमें रहना वही उत्सर्ग मार्ग है. यह तो विकल्प आता है, प्रमाद है. आलाला..! संज्वलनका उदय है. चौथा कषाय है उसका थोडा उदय है. उसको अपवाह कहते हैं. 'उत्सर्ग और अपवाहकी मैत्रीपूर्वक रहनेवाले हैं. आत्माका पोषण करके...' आलाला..! ऐसी बात. मुनि किसे कहें? आलाला..! जो 'आत्माका पोषण करके निज स्वभावभावोंको पुष्ट करते लुअे...' निज स्वभावभाव शक्तिरूप जो है, उसको व्यक्तरूपसे पुष्टि करते लुअे-प्रगटरूप पुष्टि करते लुअे. आलाला..! शक्तिरूप तो परमात्मा ही है. शक्ति-सामर्थ्य उसका भगवान आत्माका स्वभाव, परमात्माका स्वभाव ही है. यहां तो व्यक्त प्रगट करनेकी दशा. आलाला..!

'निज स्वभावभावोंको पुष्ट करते लुअे...' पर्यायमें. ध्रुव तो है ही. उसके अवलंबनसे.. आलाला..! अतीन्द्रिय आनंदको पुष्ट करते लुअे 'विभावभावोंका शोषण करते हैं.' विकल्पका नाश करते हैं. शोषण नाम नाश. दया, दान, व्रतादि पंच महाव्रतका विकल्प, वह तो अपवाहमार्ग है, दोष है, दुःख है. आलाला..! उसका शोषण करते हैं. विकल्प उठता है उसका तो नाश करनेका प्रयत्न है. आलाला..! ऐसा मार्ग.

'जिस प्रकार माताका पल्ला पकडकर चलता हुआ बालक...' साडी पकडकर चलता है. उसमें कोई कृता आ गया तो मांकी साडी बराबर पकडे. कृता आया, कोई बिछी आई तो बराबर पकडे. आलाला..! 'जिस प्रकार माताका पल्ला पकडकर चलता हुआ बालक कुछ अडचन टिभने पर...' कृता आया या कोई बिछी या गिलहरी आयी तो बालक डर गया. 'अडचन टिभने पर अधिक जोरसे पल्ला पकड लेता है,...' पल्ला. आलाला..! दृष्टांत (देते हैं).

'उसी प्रकार मुनि परिषद-उपसर्ग आने पर...' क्षुधा हो और आहार भिजे

नहीं, तृषा लो और पानी मिले नहीं. आलाला..! और जंगलमें सप्त धूप (पडती लो), उसमें ध्यानमें बैठे लो. कलते है, ऐसा परिषल पडे, 'उपसर्ग आने पर...' कोरुं ज्ञानवर आकर थप्पड मारे. आलाला..! ऐसा उपसर्ग आने पर 'प्रबल पुरुषार्थपूर्वक...' प्रबल पुरुषार्थपूर्वक 'निजात्मद्रव्यको पकड लेते हैं.' आलाला..! जैसे (बालक) उसकी मांका पछा विशेष पकड लेता है, उसकी गोदमें यला जाय. जैसे यलता लो, बाहर कोरुं कूता आया लो तो उसकी गोदमें यला जाय. आलाला..! जैसे, जब परिषल और उपसर्ग लोता है, तब 'प्रबल पुरुषार्थपूर्वक निजात्मद्रव्यको पकड लेते हैं.' आलाला..!

'ऐसी पवित्र मुनिदशा..' ऐसी पवित्र मुनिदशा 'कब प्राप्त करेंगे! ऐसा मनोरथ सम्यग्दृष्टिको वर्तता है.' आलाला..! गृहस्थाश्रममें ली समकित्तीको ऐसा भाव वर्तता है. कब मैं यल छोड़ूं और कब मैं मुनि लोउं. कब जंगलमें मेरे आत्मामें परिषल उपसर्ग आने पर ली मैं डिगू नहीं और आनंदमें जम जाउं! आलाला..! सब अनजानी बातें. आलाला..! अकेला आत्मा.. आत्मा. व्रत, नियम और पर्यभाषा ली विकल्प और राग (है). आलाला..! जोग, मन-वचन-कायाके जोगका कंपन ली नहीं. मन, वचन, काया तो नहीं, वल तो जड है, लेकिन उसके वश लोकर कंपन लोता है, उससे रलित. आलाला..! अपने आत्माको पकड लेते हैं. आलाला..! सूक्ष्म बात है, भाई! कल तो उ७६ आया था, आज उ७७ है. 'ऐसी पवित्र मुनिदशा कब प्राप्त करेंगे! ऐसा मनोरथ सम्यग्दृष्टिको वर्तता है.' आलाला..!

श्रीमद्ने अपूर्व अवसरमें कल न? श्रीमद्.

'अपूर्व अवसर ऐसा कब आयेगा? बाह्यांतर वर्तो निर्ग्रथ जे.' बाह्य और अभ्यंतर निर्ग्रथ दशा वर्तो. आलाला..! अपूर्व अवसर अेवो.. वल गुजराती है. क्यारे आवशे? 'क्यारे थरुं बाह्यांतर निर्ग्रथ जे, सर्व भावनुं छेदन करी.' सर्व भावधी उदासीन. उदासीन-परमें उदास. आलाला..! अेक आत्मामें रभाषता. वही अेक सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र मोक्षमार्ग (है). बाकी मोक्षमार्ग दूसरी कोरुं चीज है नहीं. आलाला..!

वल कलते हैं, 'ऐसा मनोरथ सम्यग्दृष्टिको वर्तता है.' लले ही गृहस्थाश्रममें रहे. रागादि लो, परंतु मनोरथमें तो.. आलाला..! मैं कब मुनि लो जाउं और जंगलमें आत्मदशा आनंदकी पुष्टि करूं. ऐसी भावना सदा रलती है. वल उ७७ (पूरा लुआ).

जिसे स्वभावकी महिमा जगती है जैसे सखे आत्मार्थीको विषय-
कषायोंकी महिमा टूटकर उनकी तुच्छता लगती है. उसे चैतन्यस्वभावकी
समग्रमें निमित्तभूत देव-गुरु-शास्त्रकी महिमा आती है. कोई भी कार्य
करते हुये उसे निरंतर शुद्ध स्वभाव प्राप्त करनेका जटका लगा ही रहता है.

गृहस्थाश्रममें स्थित ज्ञानीको शुभाशुभ भावसे भिन्न ज्ञायकका
अवलंबन करनेवाली ज्ञातृत्वधारा निरंतर वर्तती रहती है. परंतु पुरुषार्थकी
निर्भलताके कारण अस्थिरताइय विभावपरिणति जनी हुई है इसलिये
उनको गृहस्थाश्रम संबंधी शुभाशुभ परिणाम होते हैं. स्वइयमें स्थिर
नहीं रहा जाता इसलिये वे विविध शुभभावोंमें युक्त होते हैं :- 'मुझे
देव-गुरुकी सदा समीपता हो, गुरुके चरणकमलकी सेवा हो' इत्यादि
प्रकारसे जिनेन्द्र भक्ति-स्तवन-पूजन अयं गुरुसेवाके भाव होते हैं तथा
शास्त्रस्वाध्यायके, ध्यानके, दानके भूमिकानुसार अणुप्रत अयं तपादिके
शुभभाव उनके हठ बिना आते हैं. इन सब भावोंके नीच ज्ञातृत्व-
परिणतिकी धारा तो सतत चलती ही रहती है.

निजस्वइयधाममें रमनेवाले मुनिराजको भी पूर्ण वीतरागदशाका
अभाव होनेसे विविध शुभभाव होते हैं :- उनके महाप्रत, अक्वार्थस
मूलगुण, पंचाचार, स्वाध्याय, ध्यान इत्यादि संबंधी शुभभाव आते हैं
तथा जिनेन्द्रभक्ति-श्रुतभक्ति-गुरुभक्तिके उद्घासमय भाव भी आते
हैं. 'हे जिनेन्द्र! आपके दर्शन होनेसे, आपके चरणकमलकी प्राप्ति होनेसे,
मुझे क्या नहीं प्राप्त हुआ? अर्थात् आप मिलनेसे मुझे सब कुछ मिल
गया'. जैसे अनेक प्रकारसे श्री पद्मनन्दि आदि मुनिपरोंने जिनेन्द्रभक्तिके
स्रोत जहाये हैं. - जैसे-जैसे अनेक प्रकारके शुभभाव मुनिराजको भी
हठ बिना आते हैं. साथ ही साथ ज्ञायकके उग्र अवलंबनसे मुनियोग्य
उग्र ज्ञातृत्वधारा भी सतत चलती ही रहती है.

साधकको-मुनिको तथा सम्यग्दृष्टि श्रापकको-जो शुभभाव आते हैं
वे ज्ञातृत्वपरिणतिये विद्ध स्वभाववाले होनेके कारण उनका
आकुलताइयसे-दुःखइयसे वेदन होता है, हेयइय ज्ञात होते हैं. तथापि
इस भूमिकामें आये बिना नहीं रहते.

साधककी दशा अेकसाथ त्रिपटी (तीन विशेषताओंवाली) है :- अेक
तो, उसे ज्ञायकका आश्रय अर्थात् शुद्धात्मद्रव्यके प्रति जेर निरंतर वर्तता
है जिसमें अशुद्ध और शुद्ध पर्यायांशकी भी उपेक्षा होती है; दूसरा, शुद्ध
पर्यायांशका सुभइयसे वेदन होता है; और तीसरा, अशुद्ध पर्यायांश
जिसमें प्रत, तप, भक्ति आदि शुभभावोंका समावेश है उसका-
दुःखइयसे, उपाधिइयसे वेदन है.

साधकको शुभभाव उपाधिउप लगते हैं—ईसका जैसा अर्थ नहीं है कि वे भाव हठपूर्वक होते हैं. यों तो साधकके वे भाव हठरहित सहजदशाके हैं, अज्ञानीकी भांति 'ये भाव नहीं करुंगा तो परभावमें दुःख सहन करना पड़ेंगे' जैसे भयसे जबरन् कष्टपूर्वक नहीं किये जाते; तथापि वे सुजउप भी ज्ञात नहीं होते. शुभभावोंके साथ-साथ वर्तती, ज्ञायकका अवलंबन लेनेवाली जो यथोचित निर्मल परिणति वही साधकको सुजउप ज्ञात होती है.

जिस प्रकार हाथीके बाहरके दांत-दिभानेके दांत अलग होते हैं और भीतरके दांत-चबानेके दांत अलग होते हैं, उसी प्रकार साधकको बाह्यमें उत्साहके कार्य-शुभपरिणाम दिभायी दें वे अलग होते हैं और अंतरमें आत्मशान्तिका-आत्मतृप्तिका स्वाभाविक परिणामन अलग होता है. बाह्य क्रियाके आधारसे साधकका अंतर नहीं पहचाना जाता. ३७८.

३७८. बडा (बोल है). 'जिसे स्वभावकी महिमा जगती है...' जिसको भगवान आत्माका स्वभाव, स्व-स्व-अपना भाव आनंद, त्रिकावी आनंद, त्रिकावी शांति, त्रिकावी प्रभुता, त्रिकावी स्वच्छता,.. आलाहा..! जिसको स्वभावमकी महिमा, वह स्वभाव. त्रिकावी स्वभाव सनातन अनादिअनंत नित्यानंद प्रभु, उसकी स्वभावकी महिमा जगती है, 'जैसे सत्ये आत्मार्थीको...' जैसे सत्ये आत्मार्थीको, सत्य आत्मार्थी. वह आत्मार्थी है. आलाहा..! 'विषय-कषायोंकी महिमा टूटकर...' जैसे गृहस्थाश्रममें भी विषय-कषायोंकी महिमा टूटकर 'उनकी तुच्छता लगती है.' धर्मजिवको अपने स्वभावकी महिमाके आगे विषय-कषाय आ जाता है, परंतु तुच्छता लगती है. आलाहा..! अंदरमें आदर नहीं है. अंदरमें ज्ञानानंदका आदर है. बाकी विषयवासना आ जाती है. चारित्रदोष (है). भूमिका मुनिकी है नहीं. मुनिकी दृशामें भी कभी दोष आ जाता है. पुरुषार्थकी मंदता हो जाय तो. परंतु उससे भी हटकर स्वभावमें रहनेका प्रयत्न करते हैं.

'उसे चैतन्यस्वभावकी समझमें निमित्तभूत...' आलाहा..! भगवान आत्मा अकेला अतीन्द्रिय आनंदका रत्न भरा है. अतीन्द्रिय आनंदका हिरा प्रभु, शरीर प्रमाणा.. हीराका जैसे पासा होता है, वैसे प्रभुमें अनंत गुणका पासा है. आत्मामें अंदर आलाहा..! 'चैतन्यस्वभावकी समझमें निमित्तभूत देव-गुरु-शास्त्रकी महिमा आती है.' विकल्प आता है. आलाहा..! शुभभाव धर्मको भी अपने स्वउपमें स्थिर रह

सके नहीं-उत्सर्गमें, तो अपवादमें आ जाते हैं. देव-गुरु-धर्मकी मलिमा.. आलाहा..! उसके निमित्तभूत (हैं तो) आती है.

‘कोई भी कार्य करते हुआ उसे निरंतर शुद्ध स्वभाव प्राप्त करनेका...’ आलाहा..! कहते हैं कि ‘चैतन्यस्वभावकी समझमें निमित्तभूत देव-गुरु-शास्त्रकी मलिमा आती है.’ फिर भी ‘कोई भी कार्य करते हुआ...’ उस कार्यमें भी ‘उसे निरंतर शुद्ध स्वभाव...’ भगवान् अतीन्द्रिय आनंद, निर्मलानंद प्रभु अंदर वीतरागमूर्ति आत्मा.. आलाहा..! साक्षात् सिद्ध समान. ‘सर्व जो छे सिद्धसम, जे समजे ते थाय.’ श्रीमद्में है. ‘सर्व जो छे सिद्धसम’. सर्व जो सिद्ध समान हैं. अबवि या भवि. आलाहा..! शरीरसे तो रलित है, यह तो मिट्टी है, कर्म जो धूल है उससे रलित है. परंतु पुण्य और पापका भाव, देव-गुरु-शास्त्रकी मलिमाका भाव पुण्य उससे भी रलित है. आलाहा..!

‘मलिमा आती है. कोई भी कार्य करते हुआ...’ उस मलिमाके कालमें भी, देव-गुरु-शास्त्रकी मलिमाके कालमें भी ‘निरंतर शुद्ध स्वभाव प्राप्त करनेका भटका लगा ही रहता है.’ आलाहा..! भले शुभभाव आता है, परंतु अंदरमें भटका लगा ही रहता है. अतीन्द्रिय आनंदका नाथ, उसे जो पकड लिया है, उस ओरका जुकाव छूटता ही नहीं. भले रागादि आता है, फिर भी अंतरका जुकाव दूर होता नहीं. आलाहा..! ऐसी बातें. कहां संसारमें गले तक टूब गये हो. उसे ऐसी बातें (समझनी). आलाहा..!

फिर भी श्रेणिक राजा जैसे, भरत चक्रवर्ती छे जंड, ८६ हजार स्त्रियां, ८६ कोडका सैन्य फिर भी आत्मज्ञान था. आलाहा..! वह यीज नडती नहीं है, वह तो ... है. अंतर स्वप्नमें रमणता वह भिन्न यीज है. आलाहा..! ८६ हजार स्त्रियां, ८६ कोडके सैन्य.. आलाहा..! फिर भी आत्मज्ञान पर लीनता चलती ही है. अंतरमें.. अंतरमें.. अंतरमें. आलाहा..! जिसका भोजन.. आलाहा..! उ६० तो अधिकारी हैं. जो उ६० अधिकारी हैं, उसमें अेक अधिकारीको, बाहर मलिनेमें अेक दिन आहार कैसा करना, उसकी व्यवस्था बारह मलिने तक करता है. आलाहा..! क्या कला?

चक्रवर्ती समकित्ती है, आत्मज्ञानी है. उसके उ६० रसोईया नहीं है. रसोईया तो अलग. उ६०, रसोईयाको अेक दिन क्या करना, उसकी बारह मलिने भोज करके, बारह मलिने! आलाहा..! लोगोंको तो बैठना कठिन. आलाहा..! बारह मलिने तक अेक दिन कैसा आहार करना, कैसी रोटी, कैसी दाल, कैसे चावल... आलाहा..!

हीरेकी भस्म. कोडो इपयेकी हीरेकी भस्मको घीमें ढालकर, उसमें गेहूँ ढालकर, वह गेहूँ भस्मवाला घी पी जाय. उसकी बनाये रोटी. लेकिन वह सब क्ला, बारह महीनेमें अेक अधिकारी सीजे, सब ज्यालमें ले ले और फिर रसोईयाको हुकम करे. आलाहा..! आज यह बनाना. यह दाल, यह चावल, यह सब्ज, यह रोटी, यह हलवा.. जो कुछ. आलाहा..! जैसे तो उद० अधिकारी. रसोईयाको कलनेवाले. फिर भी अंतरमें निरंतर आनंदकी लहर वर्तती है. आलाहा..! जिसका भोजन, अेक बारका भोजन उर कवल बनाते हैं, अेक कवल ८६ कोडका सैन्य भा न सके. अेक कवल ८६ कोडका सैन्य हजम न कर सके. जैसे उर कवलको हजम करते हैं. आलाहा..! फिर भी अंदरमें भिन्न है. अरे..! यह नहीं, यह तो राग है. मेरी यीज तो वीतरागमूर्ति आनंद है. उस आनंदकी प्रीति, प्रेम और आदर जो परिणति है वह परिणति लटती नहीं. आलाहा..! लोगोंको तो यह कठिन लगे. बारका थोडा त्याग देजे तो मानो.. और ऐसे तो बत्तीस कवलका अेक कवल ८६ कोडका सैन्य हजम कर सके नहीं. जैसे कोडो हीरे और माणिककी भस्म करके,... आलाहा..! घीमें ढाले और उसमें ढाले गेहूँ, वह गेहूँ सब भस्म पी जाय. उस गेहूँकी बनाये रोटी. दालकी जात कोई अलग होगी. ऐसी अलौकिके बातें करे. फिर भी अंदरमें कुछ नहीं, रस बिलकुल नहीं. आलाहा..!

आत्माका स्वभाव जहां मालूम हुआ है, आलाहा..! अतीन्द्रिय आनंदका वेदन जहां हुआ है.. वह तो आ गया था न? कल कला था न? वेदन है उसका आवंजन नहीं, आवंजन तो भगवान त्रिकावीका आवंजन है. आवंजन है उसका वेदन नहीं और वेदन है उसका आवंजन नहीं. आलाहा..! अरेरे..! ऐसी बातें कभी जिंदगीमें सुनने (नहीं मिले), उसमें भी परदेसमें गये हो उसे तो हो यूका.. आलाहा..! ऐसा मार्ग प्रलुका है, भाई!

कलते हैं, उतना उर कवलका भोजन हमेशा ले तो भी उससे भिन्न रहते हैं. अंदर अपने आनंदको यूकते नहीं. अपने आनंदकी दशा पर जो दृष्टि लुई है और जो परिणामन हुआ है, परिणामन नाम आनंदकी जो पर्याय प्रगट लुई है, उसमें ऐसी भोजनकी दशा हो तो भी उसे वर्तमान आनंदमें कमी नहीं आती. आनंद बढता नहीं, परंतु वर्तमान आनंदमें कमी नहीं आती. आलाहा..! मार्ग प्रलुका अलग है, भाई! 'प्रलुनो मार्ग छे शूरानो, कायरना नहि काम'. 'जिननो मार्ग छे शूरानो, कायरना काम नहि त्यां'. सुन सके नहीं ऐसी बात. आलाहा..! ऐसा भोजन और समकित्ती! और अेक बार भी जाये नहीं और अेक-अेक महीनेका

उपवास. द्रव्यविंगी नग्न मुनि जंगलमें बेसे, परंतु आत्मज्ञान बिनाका बिना अंकके शून्य. आलाहा..! वह चार गतिमें रभडेगा.

यहां वह कहते हैं, 'कोई भी कार्य करते हुआ उसे निरंतर...' निरंतर है न? 'शुद्ध स्वभाव प्राप्त करनेका भटका लगा ही रहता है.' शुद्ध स्वभावकी वृद्धि करनेका भटका लगा ही रहता है. आलाहा..!

'गृहस्थाश्रममें स्थित ज्ञानीको...' गृहस्थाश्रममें स्थित ज्ञानीको 'शुभाशुभ भावसे भिन्न...' उसको भी शुभभाव और अशुभभाव भी आता है. गृहस्थाश्रममें समकित्ती है, आत्मज्ञानी उसको भी शुभभाव और अशुभ दोनों आते हैं. आलाहा..! रौद्रध्यान आता है, पंचम गुणस्थानमें. परंतु अंदरमें भिन्न पडा है, उसमेंसे हटता नहीं. आलाहा..! वह कहते हैं कि 'गृहस्थाश्रममें स्थित ज्ञानीको शुभाशुभ भाव...' अशुभभाव भी आते हैं और शुभभाव भी आते हैं. आलाहा..! समकित्ती है, धंधा भी करता है. श्रीमद् राजचंद्र. बाजोंका जवाहरातका धंधा करते थे. फिर भी नावियेरमें जैसे गोवा भिन्न होता है, .. वैसे यह नारियेलका गोवा यह शरीर-नारियेल, उसमें भगवान गोवा आनंदका नाथ अंदर भिन्न हो गया है. आलाहा..! ऐसी बात है. बाजोंका व्यापार करते थे.

अक बार तो अक माणिक या रत्नका व्यापार किया था, कोई जोहरीकी दुकानमें. उसने पुडिया बना दी. जिसका सौदा था वह भूल गया, वह बेनेवावा. और उंची चीजकी पुडिया, जिसमें बाजों रुपये मिले ऐसी पुडिया दे दी. जो सौदा था वह साधारण हिरिका था और उस हिरिकी किमतका पार नहीं, उसकी पुडिया बना दी. वह पुडिया लेकर घर आये. आकर जहां जोलकर देखा.. अरेरे..! अरे..! बेचारा अभी आयेगा. यह चीज हमारी नहीं, हमने इसका सौदा नहीं किया है. बाजोंकी कमाई. उस पुडियामें बाजोंकी कमाई थी. आलाहा..! जैसे उंचे हीरे. उसे जोलते थे, उतनेमें वह आया. भाई! हमने यह सौदा नहीं किया है. अरे..! भाई! प्रभु! यह रही चीज, भाई! वे जा. तेरी चीज वे जा. हमने जो सौदा किया वह चीज वाओ. उसे ऐसा लगा, यह है कौन? यह कोई दैवी पुरुष है! जिसे मैंने पुडिया बना दी, तो भी अभी जोलकर मुझे देता है. मेरी भूल हुयी कि मेरे हाथमें यह आ गया. आलाहा..! लौकिकमें नैतिक जवन धर्मीका ऐसा होता है. आलाहा..! धर्मीजवका नैतिकपना भी अवैकिक होता है. उस वक्त बाजों (मिलते थे). उस वक्त. अभी तो किमत कम हो गई. उस वक्तका अक बाज और अभीके पचीस बाज. उस वक्त बाजोंकी किमतकी पुडिया. जोलकर देभते हैं तो, अरे..! इसका

सौदा मैंने नहीं किया है. अरे..! यह क्या आ गया? उतनेमें वह आया, उसे दे दिया. वह लेता है और ओलता है, ये दैवी पुरुष है कौन? आलाला..! जिसे आत्माकी पडी है, उसे दुनियाकी कोई चीजकी दरकार नहीं. कोडों इपया हो या न हो. आलाला..!

यहां यह कहते हैं, 'गृहस्थाश्रममें स्थित...' समकित्ती धर्मी-आत्माका भानवाला. ज्ञानीको 'शुभाशुभ भावसे...' शुभ और अशुभ दोनों भाव होते हैं. आलाला..! है? शुभभाव भी होता है और अशुभभाव भी होता है. आलाला..! 'शुभाशुभ भावसे भिन्न ज्ञायकका अवलंबन करनेवाली...' ज्ञायक स्वरूप भगवान आत्मा, जैसा नित्यानंद प्रभु, ज्ञानका हिरा पूरा भगवान आत्मा, उसकी जे अंतर दृष्टि, पकड, अनुभव हुआ है, वह 'ज्ञायकका अवलंबन करनेवाली ज्ञातृधारा...' वर्तमान पर्याय. त्रिकाव ज्ञायकको पकडनेवाली वर्तमान ज्ञातृधारा. ज्ञायकको पकडनेवाली ज्ञायकधारा. ज्ञायक वह द्रव्य त्रिकावी. उसको पकडनेवाली-अनुभव करनेवाली धारा वह पर्याय है. आलाला..!

'ज्ञायकका अवलंबन करनेवाली...' आलाला..! कौन? ज्ञातृधारा. 'निरंतर वर्तती रहती है.' आला..! ज्ञायक स्वरूप भगवान आत्मा, जिसमें पुण्य-पाप तो है नहीं, शरीर, वाणी, मन तो है नहीं. दया, दान, काम, क्रोध है नहीं, परंतु जिसमें अल्पता है नहीं. वह तो परिपूर्ण आनंद और परिपूर्ण शक्तिसे भरा पडा है. अशुद्धता है नहीं.. आला..! परंतु अपूर्णता है नहीं. आलाला..! जैसी बातें हैं. अनजाने आदमीको तो जैसा लगे कि यह क्या? उस रास्ते पर चला नहीं है. आला..! वीतराग त्रिलोकनाथ जिनेश्वरका अंतर मार्ग, वह पंथ सुना नहीं, उर रास्ते पर चला नहीं. आलाला..! उसे तो रजडनेका रास्ता (है).

यहां कहते हैं, धर्मीको गृहस्थाश्रममें शुभ और अशुभभाव होने पर भी. शुभाशुभ भाव तो विकार है, फिर भी कमजोरीसे होता है, परंतु उससे भिन्न ज्ञायकका अवलंबन करनेवाली ज्ञातृधारा. त्रिकावी ज्ञायक स्वरूप, उसका अवलंबन करनेवाली वर्तमान ज्ञानकी पर्याय. आलाला..! ज्ञातृधारा 'निरंतर वर्तती रहती है.' भाषा तो सादी है, प्रभु! माव तो जे है सो है. आलाला..! माव, अकेला मकभन है.

'परंतु पुरुषार्थकी निर्बलताके कारण...' यह क्या कहा परंतु? कि ज्ञायकभाव जे त्रिकाव है, उसकी परिणतिमें ज्ञातृधारा तो बलती है. ज्ञानन, ज्ञानन-देषन, आनंदकी दशा तो वर्तती है. फिर भी, 'परंतु पुरुषार्थकी निर्बलताके कारण अस्थिरताइय विभावपरिणति बनी हुई है...' आलाला..! गृहस्थाश्रममें भी बडी-बडी लडाई करते

हैं. आलाला..! अरबोंका व्यापार होता है. चक्रवर्तीका राज किसे कहें! जिसके बत्तीस कवलमेंसे अेक कवल ८६ कोड सैन्य न जा सके, वल उर कवल लमेशा जाये, फिर भी वल समकित्ती. और दूसरा लूजी रोटी जाय, दूध और घीका त्याग करके. फिर भी उसे रागका प्रेम है और आत्माका प्रेम नहीं है. अंतर ज्ञायक ओरकी दृष्टि होकर ज्ञायककी धारा जगृत नहीं लुयी है. वल अज्ञानी है.

मुमुक्षु :- ज्ञाताधारामें पूर्णता है कि अपूर्णता है?

उत्तर :- कायम-कायम चलती है. जितनी निर्मल भीली है, भीली है उतनी, भीली है उतनी. गृहस्थाश्रममें दो कषायका अभाव. मिथ्यात्वका अभाव लुआ, उतनी भीली है. जितनी भीली है धारा वल चलती है. आलाला..! समजमें आया? ऐसी बातें. आलाला..!

‘विभावपरिणति बनी लुई है...’ पुरुषार्थकी कमजोरीसे धर्मीको भी शुभ-अशुभभाव आता है. आलाला..! अंधका कारण है, आता है. परंतु वल अस्थिरताके कारण, निर्बलताके कारण. ‘ईसलिये उनको गृहस्थाश्रम संबंधी शुभाशुभ परिणाम लोते हैं.’ है ना? शुभ-अशुभभाव. अशुभभाव भी लोता है. आलाला..! पुत्री-पुत्री, स्त्री, पुत्र, कुटुंब. विकल्प उठता है, जानते हैं कि वल कोई मेरी चीज नहीं है. मैं किसीका नहीं हूं, वल मेरे नहीं है. परंतु अस्थिरताके कारण स्वइपकी दृष्टि होने पर भी, उस लूमिकाके प्रमाणमें, उस दशा अनुसार ज्ञायककी ज्ञायकधारा निर्मल परिणति वर्तती होने पर भी जैसे विभाव शुभाशुभ भाव आता है. आलाला..! ऐसा धर्म. ऐसा कैसा? दूसरोंको ऐसा लगे, वल जैन धर्म लोगा? आलाला..! लम तो अेकेन्द्रियकी दया पावो, व्रत करो, वल सुना था. वल बात तो ईसमें कहीं नहीं आती. आलाला..! प्रलु! वल मार्ग कोई दूसरा है. आलाला..! बाह्य व्रत, तप और क्रियाकांड.. अरे..! शरीरसे ब्रह्मचर्य पावे, प्रलु! वल भी धर्म नहीं. वल शुभभाव है. आलाला..!

ब्रह्म नाम आत्मा ज्ञायक है, उसको पकडकरके उसमें लीनता लोती है और अतीन्द्रिय आनंदका स्वाद आता है, उसका नाम ब्रह्मचर्य है. सब बातमें ईर्क है, नाथ! तू बडा प्रलु है, लगवान! तेरी बात तूने सुनी नहीं. आलाला..! तू कितनी किमतका और कितनी ऋद्धिसे (लरा है), कितनी किमत और तेरे अंदर कितनी ऋद्धि लरी है. आलाला..! सिद्ध समान ऋद्धि सब पडी है तेरेमें. लगवान! तूने नजर नहीं की. आलाला..!

यहां कहते हैं कि गृहस्थाश्रममें आत्मज्ञान होने पर भी, धर्मध्यान होने पर

भी विभाव परिणति आती है, शुभाशुभ परिणति होती है, स्वप्नमें स्थिर नहीं हो सकता है. आलाला..! 'स्वप्नमें स्थिर नहीं रहा जाता इसलिये वे विविध शुभभावोंमें युक्त होते हैं...' यह बात ली. पहले तो शुभाशुभ दोनों भाव लिये थे. फिर एक शुभकी ली. 'विविध शुभभावोंमें युक्त होते हैं.' भक्ति, वांचन, श्रवण, चर्चा-वार्ता शास्त्रकी यह सब शुभभाव है. करते हैं. ओहोहो..!

'मुझे देव-गुरुकी सदा समीपता हो,...' आलाला..! ऐसी भावना भी करते हैं. है शुभभाव, विकल्प. 'मुझे देव-गुरुकी सदा समीपता हो, गुरुके चरणमलकी सेवा हो.' आलाला..! ऐसा विकल्प शुभभाव ज्ञातृधारा होने पर भी, ज्ञानन शक्तिकी व्यक्तता प्रगट होने पर भी यह भाव आता है. क्योंकि पूर्ण शुद्धता प्रगट नहीं हुयी है. 'ईत्यादि प्रकारसे जिनेन्द्रभक्ति,...' जिनेन्द्र भक्ति भी आती है. ज्ञानते हैं कि यह शुभभाव है, पुण्य है, धर्म नहीं. आलाला..! 'स्तवन..' शुभभाव है. भगवानका स्तवन गाते हैं. कल भाई! एक लेख आया है. कोई आर्जिकाने.. एक मासिक आता है, समयसारका गीत बहुत अच्छा बनाया है. समयसारकी प्रशंसा की गीत बनाकर. उसे जो बैठा हो, वह अलग बात. परंतु समयसारकी ऐसी प्रशंसा की है, ऐसी प्रशंसा की है. आलाला..! गीत बनाया है. समयसार यानी क्या चीज! आलाला..! इस भरतक्षेत्रकी उग्र, उत्तमसे उत्तम चीज!! जगतचक्षु! आलाला..! समयसार यानी आत्मा. आलाला..!

आत्माकी परिभाषा समयसारमें कुंडकुंदाचार्यने की है, वह बहिन कहती हैं. आलाला..! भक्ति आती है, स्तवन आता है, पूजन आता है 'अवं गुरुसेवाके भाव होते हैं...' आलाला..! शुभभाव आता है. परंतु धर्मी ज्ञानते हैं कि शुभभाव पुण्य है. मेरे आदर करने लायक नहीं है. आलाला..! फिर भी पुरुषार्थकी कमजोरीसे आये बिना रहता नहीं. आलाला..! एक म्यानमें दो तलवार? दो नहीं है. चैतन्य भगवान निर्मलानंद वीतरागमूर्ति प्रभु, उसकी धारा निर्मल भी चलती है और साथमें राग भी चलता है. शुभ और अशुभ राग. साधक है वहां बाधक तो होता ही है. मिथ्यादृष्टिको आंशिक धर्म भी नहीं है. अकेले शुभ और अशुभभाव (हैं). भगवानको आंशिक भी दृष्टि नहीं है. अकेले शुद्ध स्वभावका पूर्ण परिणामन (है). साधकको जितना स्वभावके आश्रयसे शुद्धता (हुयी उतनी शुद्धता है). जितना लक्ष्य पर उपर जाती है, उतनी अशुद्धता है. दोनों साथमें चलती है. आलाला..! दोनों साथमें चलती है.

एक श्लोक आता है न? भाई! जब तक कर्मकी पूर्ण विरती न हो,.. श्लोक

आता है. तब तक राग आये, आये, उससे विरोध नहीं है. विरोध यानी वहां ज्ञातृपना न रह सके, राग आया ठसलिये ज्ञातृपना न रह सके ऐसा भी नहीं. वैसे राग आया ठसलिये धर्म है, ऐसा भी नहीं. आलाहा..! श्लोक है न? भाई! यावत् कर्म विरति. कर्म यानी कार्य-राग. रागकी पूर्ण निवृत्ति नहीं है, तब तक धर्मी-समकृती-आत्मज्ञानीको भी राग तो आता है. अशुभराग आता है. आलाहा..! लेकिन उसकी मीठास नहीं है. आलाहा..! उसका भेद, दुःख, ऊहरे जैसा ज्ञानते हैं. पुरुषार्थकी कमजोरीके कारण.. आलाहा..! पहले शुभाशुभ भाव कला है, बादमें शुभभावकी बात की है.

गुरुकी सेवा 'तथा शास्त्रस्वाध्यायके,...' शास्त्रस्वाध्याय वह भी विकल्प है, शुभभाव है. धर्म नहीं. आलाहा..! शास्त्र कलना और सुनना, दोनों राग है. आलाहा..! आये बिना रहे नहीं. कमजोरीसे आता है, परंतु है नुकसानकारक. अरर..र..! समाधि शतकमें तो वहां तक लिया है, मुनि कलते हैं कि हमको उपदेशका विकल्प आता है, शुभराग है, परंतु वह पागलपन है. ऐसा कलते हैं. आलाहा..! समाधि शतक. योगीन्द्रदेव. उपदेशका शुभभाव आता है वह पागलपन है. क्यों? कि हमारे रागसे वह समज नहीं ज़येगा. उसकी पर्याय स्वतंत्र है. उसकी पर्याय उसके कारणसे स्वतंत्र प्रगट होगी. आलाहा..! तो ऐसा राग आया है वह निरर्थक है. आलाहा..! सुननेमें भी राग आया वह विकल्प राग है. गणधर भी भगवानकी वाणी सुनते हैं, परंतु है शुभराग, धर्म नहीं. आलाहा..!

'शास्त्रस्वाध्यायके, ध्यानके,...' अंदर ध्यान करुं ऐसा विकल्प आता है. शुभ.. शुभ. 'दानके,..' सख्ये मुनि, संत आदिको धर्मीको दानादिका भाव आता है, वह पुण्य शुभभाव है. पुण्य है. 'भूमिकानुसार...' देओ! 'अशुभ्रत एवं तपादिके शुभभाव उनके लठ बिना आते हैं.' भूमिका अनुसार अशुभ्रत बारल प्रत लोते हैं, तपादि लोते हैं. वह 'शुभभाव उनके लठ बिना आते हैं.' सहज आते हैं. उस कालमें कमबद्धमें आनेवाला है तो आया है, ऐसा ज्ञानकर दूर रहते हैं. लठ बिना. आलाहा..! 'धन सब भावोंके बीच ज्ञातृत्व-परिणतिकी धारा तो सतत चलती ही रहती है.' में ज्ञाननेवाला हूं, यह बात तो सदा चलती रहती है. उसमें विरल पडता नहीं.

(श्रोता :- प्रमाण वचन गुरुदेव!)

